शोध प्रतिवेदन

संत कबीर के शैक्षिक विचारों का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समीक्षात्मक अध्ययन

निर्देशक
श्री मनीष सैनी
(असिस्टेंट प्रोफेसर)

प्रस्तुतकर्त्री
प्रीति जाटव
(एम.एड. छात्रा)

बियानी गर्ल्स बी.एड़ कॉलेज, जयपुर(राजस्थान)

(सत्र 2015-17)

1 कबीर के शिक्षा सम्बन्धी विचारों की समीक्षा –

महान शिक्षा दार्शनिक संत कबीर के शैक्षिक एवं दार्शनिक विचार आज के मानव को एकता और भाईचारे का सन्देश देते हैं। किसी भी राष्ट्र की नींव उसके युवाओं पर निर्भर होती है। आज जिस प्रकार की विचारधारायें फलफूल रही है, तथा जिस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था चल रही है वस्तुतः उसमें आमूल–चूल परिवर्तन लाने होंगे। विशेष रूप से उसके आधारों पर पुनर्विचार की अत्यन्त आवश्यक है। कबीर के विचारों पर सुक्ष्म विश्लेषणोपरान्त कहा जा सकता है कि वे चाहते थे कि शिक्षा को राष्टीय अर्थात् 'सर्व जन' के कल्याणार्थ, हितों की पूरक के रूप में होना चाहिए। इसके लिए प्रचलित भारतीय शिक्षा उपक्रमों को भारतीय संस्कृति और मान्यताओं का आधार देना होता है।

संत कबीर का दर्शन व्यवहार कुशल परिवर्तित वातावरण के अनुकूल चलने, योग्य स्थानीय मान्यताओं पर विश्वास रखने योग्य तथा विस्तृत दृष्टिकोण अपना कर वैज्ञानिक चिन्तक एवं अभ्यासकर्ता बन सकने पर जोर देता है। यदि हम 'गौ' और 'गंगा' को केवल फूलों और भोगों से ही पूजते रहे और उनके महत्व को न समझे, उनकी सुरक्षा और सेवा करके लाभ न उठायें तो यह एकमात्र अन्धविश्वास, रूढ़िवादिता और अवैज्ञानिक व्यवहार ही कहलायेगा। शिक्षा का कर्त्तव्य है कि वह व्यक्ति को किसी भी वस्तु, प्राणी अथवा परम्परा के महत्वपूर्ण आधार को समझाकर उससे मानवोपयोगी लाभ उठाने की सामर्थ्य प्रदान करे। कबीर कहते है कि व्यक्ति तभी सामाजिक हो सकता है जबकि वह संकीर्ण एवं संकुचित विचारधाराओं के मदों,

अन्धविश्वासों, रूढ़िवादिता एवं अनैतिकता से, असत्य एवं हिंसात्मक आचरण से, अवैधानिक व्यवहार से छुटकारा पा सके तथा उसमें सत्याचरण, अहिंसा, श्रम, समाज सेवा, वैज्ञानिक चिन्तन, आत्मनिर्भरता, व्यावसायिक क्षमता तथा खोजकर्ता के प्रति रूचि, रूझान उत्पन्न कर सकें और इन्हें अपने जीवन का अंग बनाने का अवसर दे सके। जब हम प्राचीन भारतीय शिक्षा का अध्ययन करते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि उस काल की शिक्षा पूर्णतया उत्पादनशील शिक्षा थी। उस समय शिक्षा वह थी जो 'धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष' के भाव उत्पन्न करके इन्हें शिक्षार्थी के जीवन का अंग बनाने का अवसर देती थी। अधिक विस्तार में न जाकर सार रूप में इसे स्पष्ट किया जा सकता है। वैशेषिकी के अध्याय–1 के सूक्त 2 में धर्म की परिभाषा दी है –

यातेऽभ्यूदयानिः श्रेयता सिद्धिः स धर्मः ।।

जिस आचरण के करने से संसार में उत्तम सुख, कल्याण और मोक्ष की प्राप्ति होती है। वही धर्म इसीलिये पू०मीमांसा के अध्याय–1 के प्रथम सूक्त में सत्याचरण की प्रेरणा देने वाले प्रेरकों को धर्म का लक्षण माना है।

सत्याचरण की प्रेरणा देना ही धर्म का लक्षण है। अतः भारत में शिक्षा द्वारा शिक्षार्थी में सत्याचार (समाज द्वारा मान्य आचरण) करने की प्रवृत्ति उत्पन्न की जाती थी। इससे शिक्षार्थी में भय, अन्धविश्वास, अवैज्ञानिक चिन्तन, रूढ़िवादिता और अनैतिकता के दोष उत्पन्न नहीं होते थे। शिक्षार्थी का व्यवहार, आदर्श, सत्य एवं अहिंसा से पूर्ण होता था। उनका व्यवहार पूर्णतः वैज्ञानिक था जो उनके जीवन में पूरी तरह उतर चुका था। 'अर्थ' उस काल की शिक्षा का अंग था। 'अर्थ' से तात्पर्य उन सभी क्षमताओं तथा रूचियों से था जो बालक को व्यावसायिक क्षमता को अपने जीवन का अंग बना लेता था और आत्मनिर्भरतापूर्वक व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं विश्व की समृद्धि में योगदान देता था।

'काम' तत्कालीन शिक्षा का तृतीय अंग था। 'काम' से तात्पर्य गृहस्थ शिक्षा, परिवार नियोजन, बाल शिक्षा, पोषण, सेवा–सुश्रुषा आदि से था। 'पुरूष–स्त्री' सर्वगुण सम्पन्न तथा भावी जीवन के लिए उद्यत होकर उचित आयु में गृहस्थ जीवन व्यतीत करे और आवश्यक तथा सीमित सन्तान उत्पन्न करें। आज हमारी शिक्षा में इस शिक्षा का पूर्णतः अभाव है। बालक–बालिकाओं को शिक्षालयों में यह शिक्षा नहीं दी जाती जो उन्हें गृहस्थ–आश्रम में प्रवेश करते समय स्वस्थ सन्तान उत्पन्न करने, परिवार नियोजन करने, बाल–पोषण करने तथा बाल–शिक्षा व्यवस्था करने की सामर्थ्य उत्पन्न कर सके। यही कारण है कि अधिकांश परिवार रोगग्रस्त और परावलम्बी है।

मोक्ष शिक्षा का अन्तिम चरण माना जाता था। 'मोक्ष' का तात्पर्य उस दशा को प्राप्त कर लेने से था जिसमें व्यक्ति स्वस्थ चित्त, स्वस्थ ज्ञानेन्द्रियों तथा

जननेन्द्रियों पर अपनी आत्मा और बुद्धि का नियन्त्रण रख सके। इस नियन्त्रण की दशा में व्यक्ति आत्म–चिन्तन, आत्म निरीक्षण द्वारा आत्मानुभूति प्राप्त करता था। इस आत्मानुभूति द्वारा व्यक्ति में आत्मानुशासन जाग्रत होता था। वह आत्मानुशासित होकर मानव कल्याण के लिये चिन्तन, शोध (खोज कार्य) तथा सेवा कार्य करता था। उपरोक्त विवरण के आधार पर कबीर के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है –

1. अन्तकरण से साक्षात्कार कराने वाली अनुभूति को शिक्षा कहा गया है।
2. शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का माध्यम है।
3. पुस्तक आधारित शिक्षा को वास्तविक शिक्षा नहीं माना गया है।
4. व्यक्ति को व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करने वाले माध्यम को शिक्षा कहा गया है।

   शिक्षा व्यक्ति में विवेक जागृति का माध्यम है।
6. शिक्षा गुरू–शिष्य सम्बन्धों का आधार है और दोनों की सार्थकता व अर्थवत्ता शिक्षा पर ही अवलम्बित है।
7. कर्मकांड आधारित रूढ़ियों व गलत परम्पराओं में उलझी शिक्षा को मिथ्या शिक्षा (ज्ञान) कहा गया है।
8. खेल आदि के माध्यम से शारीरिक, चारित्रिक, सुदृढ़ता प्रदान करने वाली शिक्षण प्रक्रिया की आवश्यकता पर बल दिया गया है।
9. चित्र वृत्तियों के निरोध के लिए शिक्षण पद्धति में यौगिक क्रियाओं के समावेश की आवश्यकता पर जोर दिया गया।
10. शिक्षा प्राप्ति की चार मुख्य विधि बताई – चिन्तन अथवा विचार–विमर्श, सिद्धान्तों के अनुसार जीवन–यापन, सतसंगत, अनुभव द्वारा ज्ञानार्जन।

2 शिक्षक एवं शिष्य सम्बन्धी विचारों की समीक्षा –

कबीर कलि खोटी भई, मुनियर मिलै न कोई।
लालच लोभी मसकरा, तिनकू आदर होई।।

कबीर के शब्द जहाँ सतगुरू के प्रति निष्ठा और आदर व गुरू के नाम पर लालच और लोभ की चार ओढ़ने वालों के प्रति वितृष्णा प्रकट करते हैं, जहाँ सच्चे गुरू दुलर्भ हो रहे है और समाज में लोभी, लालची और ज्ञान से हीन व्यक्ति ही सम्मान और प्रतिष्ठा पा रहे है।

आज का शिक्षक–वर्ग समाज के प्रति कोई दायित्व नहीं मानता। छात्रों का प्रेरक मार्गदर्शक नहीं, बल्कि डिग्री दिलाने का माध्यम मात्र रह गया है, जिसे धन

से खरीदा जा सकता है। पहले गुरू सिर्फ अध्ययन और अध्यापन को समर्पित थे, लेकिन आज धन की अन्धी लिप्सा ने उन्हें दुकानदार, ठेकेदार, व्यवसायी, तांत्रिक, ज्योतिषी बना दिया है। यह पतन यहीं रूक जाता तो भी ठीक था, लेकिन इस कलयुग में एक शिक्षक द्वारा धन के लालच में अपनी शिष्याओं को ही जब देह के व्यापारियों के हाथों बेच देने का मामला प्रकाश में आता है, तो समाज के सर्वाधिक समादृत माने लाने वाले शिक्षक समुदाय की विश्वसनीयता पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाता है। ऐसी विकट परिस्थितियों में वर्तमान शिक्षा प्रणाली में कबीर द्वारा दिए गए शिक्षक सम्बन्धी विचारों को मार्गदर्शक के रूप में अपना कर वर्तमान शिक्षक व छात्र सम्बन्धों को सुधार हेतु प्रयास किया जाना चाहिए।

जल परमाने माच्छली, कुल परमाने बुद्धि।
जाको जैसा गुरू मिलै, ताकौ तैसी सुद्धि।।

कबीर ने तो गुरू के शब्द को ही इतना महत्व दिया था कि सब पुस्तकें व्यर्थ लगी थी। उन्हें बिना पुस्तकें पढ़े ही गुरू के शब्द–बाण झेलकर ही ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। कबीर इस तथ्य का जीवित उदाहरण है। मात्र दो शब्दों के गुरू–मंत्र ने कबीर को ज्ञान, भक्ति और कर्म का अनश्वर स्मारक बना दिया। गुरू के ज्ञान और कसौटी है और कबीर का तो मानना था कि शिष्य के चरित्र का प्रमाण उसका गुरू होता है। शिक्षा की सार्थकता का आधार सद्गुरू ही होता है। वेद–पुराणों में, प्राचीन कथाओं में माता–पिता से बढ़कर गुरू को स्थान मिला। कबीर भी यही कहते हैं –

कोई भी सत्कर्म बिना गुरू की आज्ञा से, आशीर्वाद के नहीं फलित होता। कबीर द्वारा शिक्षक सम्बन्धी विचारों को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है–

गुरू बिन माला फेरते, गुरू बिन देते दान।
गुरू बिन दान हराम है, पुछौ वेद कुरान।।

1. शिक्षक (गुरू) पुस्तक ज्ञान की अपेक्षा अनुभव–सम्पदा सम्पन्न हो।
2. शिक्षक (गुरू) नैतिक, आध्यात्मिक दृष्टि से समृद्ध हो।
3. शिक्षक (गुरू) में सुक्ष्य पर्यवेक्षण दृष्टि हो।
4. कबीर की साखियों में जिन अपेक्षित अर्हताओं के आधार पर शिक्षक (गुरू) का महत्व–निर्धारण हुआ है वे निम्नवत् है –

1. वीरत्व भाव	2. सहनशीलता	3. चारित्रिक दृढ़ता
4. शिष्य–वात्सलता	ईश्वर–भक्ति	6. विराट जीवन अनुभव
7. निर्लोभ	8. रागवृत्ति	

कबीर की साखियों में सामान्य गुरू और सद्गुरू के रूप में शिक्षक के दो भेद निर्धारित किये गये है।

6. जिस गुरू में शिष्य की क्षमताओं और योग्यताओं को पहचानकर शिष्य का ध्यान लक्ष्य की ओर उन्मुख करने की योग्यता नहीं है, वे सामान्य स्तर के गुरू है।

7. गुणों से युक्त और मायातीत शिक्षक सद्गुरू माना गया है। सद्गुरू ईश्वर तुल्य है।

8. कबीर की साखियों के अनुसार श्रेष्ठ शिक्षक के निम्नांकित कर्त्तव्य हैं – जो वर्तमान मे भी आवश्यक है।

   (1) शिष्य की स्वरूप में स्थापना अर्थात् उसे आत्मविश्वास के साथ उद्देश्य बोध कराना।

   (2) सांसारिक आसक्तियों व प्रलोभनों से शिष्य से विमुक्त रखना।

   (3) शिष्य के शरीर और मन के स्तर के चांचल्य, भय, द्वन्द्व, भटकन व तनाव आदि को समाप्त करना।

   (4) शिष्य को कर्त्तव्य व साधना के पथ पर अग्रसर रखना।

   (5) शैक्षिक दृष्टि से शिष्य को स्नेहपूर्वक दिव्य ज्ञान के द्वारा लक्ष्य प्राप्ति कराना।

   (6) शिष्य के मानसिक, शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक सभी स्तर पर विकास के प्रति सजग सचेष्ट और सक्रिय रहना।

बलिहारी गुरू आपणै, द्यौहाड़ी के बार।
जिन्ही मानुष ते देवता, करत न लागी बार।।

अर्थात् गुरू के प्रति अनन्य समर्पण ही शिष्य का लक्ष्य होना चाहिए। आज भी तमाम विकृतियों के बाद भी वह शिक्षा के क्षेत्र में कुछ ही सही ऐसे लोग हैं जो अपनी सांस्कृतिक परम्परा में विश्वास रखते है। ऐसे लोग गुरू भी है और छात्र भी, किन्तु आदर्श को यथार्थ के धरातल पर उतारने के प्रयास समाज के उत्थान के लिए अति आवश्यक है। इसके लिए सर्वप्रथम शिक्षक–समुदाय को ही अपने अन्तर्मन में झांककर देखना होगा। अपनी कमियों को दूर करना होगा, स्वयं को इस योग्य बनाना होगा कि उनके शिष्य भले ही उन्हें ईश्वर के समकक्ष न समझें, किन्तु यथोचित सम्मान तो दे और आयु व अनुभव, ज्ञान में बड़े होने के कारण यह उत्तरदायित्व शिक्षक–समुदाय को वहन करना होगा, क्योंकि शिष्य के आदर का सच्चा उत्तराधिकारी भी वही होगा, जो सत्य की शिक्षा देगा –

गुरू गुरू में भेद है, गुरू गुरू में भाव।
सोई गुरू नित बंदिये, शब्द बतावै दाव।।

छात्रों के गिरते चरित्र के कारणों की खोज करते है तो हम उसके पारिवारिक संस्कारों, उसके परिवेश में दोष पाते है, जहाँ उसे बताया ही नहीं गया कि गुरू, उसका सम्मान क्या होता है। जब माता–पिता घर में ही आकर पढ़ाने वाले ट्यूटर की सुविधा उपलब्ध करा देंगे, तो वह आदर स्वमेव समाप्त हो जाएगा। फिर उसे तो कैरियर बनाना है, चरित्र नहीं, पैसा कमाना है इज्जत नहीं और लाइफ एन्जाए करनी है, समर्पित नहीं। आप उनसे लेटेस्ट फैशन, पॉप और फिल्मों की बाते कीजिए गुरूजी, शिक्षक? क्यों समय नष्ट करते हैं?

कुल मिलाकर संस्कार देने में असफल होती शिक्षा–प्रणाली, अपने ही स्वार्थों में डूबे रहे शिक्षक और पथभ्रष्ट होते छात्रों के बीच यदि कुछ बचा है, तो कबीर के आदर्शों को मानने वाले, उन पर आचरण करने वाले मुट्ठी–भर शिक्षक, शिक्षा को विक्रय नहीं, दान की वस्तु समझने वाले लोग और गुरू को बिकाऊ नहीं, श्रद्धेय और दुलर्भ मान उनके प्रति समर्पित होने वाले कुछ ही शिष्य यह विश्वास दिलाते है कि हम थोड़े ही सही, पर हमारा होना ही मानवता और नैतिकता के अस्तित्व को बचाए रखने के लिए काफी है और हमें आशा है, कल कुछ और लोग भी हमारे साथ होंगे, जो कबीर के मार्ग पर, त्याग, समर्पण और ज्ञान के मार्ग पर चलने के इच्छुक होंगे। इसी आस्था को लेकर चल रहे लोग ज्योति–पुंज है। हम लोगों के लिए, जो ज्ञान के प्रकाश से शिक्षा–जगत् के अन्धकार को दूर करेंगे, क्योंकि – ''विकृत होते जीवन–मूल्यों वाले इस समाज में जब 'आंधरा गुरू' निपट निरंध शिष्यों को निरूद्देश्य ढोल रहा हो और अनन्तः दोनों ही कुएँ में गिर रहे हो, तो अनन्त महिमा वाले, अनन्त उपकार करने वाले, अन्तः चक्षुओं को खोलने वाले और तथ्य–ज्ञान का दर्शन कराने वाले सत्गुरू की चर्चा जीवन–मूल्यों की रक्षा के लिए नितान्त आवश्यक है।

अतः केवल बुराई की भर्त्सना ही नहीं, बल्कि अच्छाई और सच्चाई की प्रशस्ति भी आवश्यक है। कबीर ने इन दोनों दायित्वों का निर्वाह भली–भाँति किया था। आज के युग के गुरू और शिष्य दोनों को ही अपने–अपने कर्त्तव्यों का निर्वहण करने में कबीर का मार्गदर्शन अत्यन्त सामयिक और उपयोगी सिद्ध होगा।

3 आध्यात्मिक विचारों की समीक्षा –

संत कबीर का जीवन जो नितान्त अनुभवजनित है, वह जितना मध्ययुगीन भारत के लिए सामयिक था उतना वर्तमान परिस्थितियों के लिए भी प्रासंगिक है। वस्तुतः कबीर का दर्शन 'सहज' अर्थात् सरल मानव जीवन के उच्च विचारों से ओत–प्रोत था। कबीर के विचारों का समृद्ध एवं गौरवशाली भारतीय संस्कृति के पोषण एवं संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

कबीर ने भारतीय संस्कृति की मूल आत्मा सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय तथा जीओ और जीने दो को जन–जन की वाणी के माध्यम से आम आदमी तक पहुँचाया। इसी समृद्ध विचार सम्पदा ने भारतीय जीवन को सदैव अनुप्रमाणित किया है। लेकिन हमारी वैचारिक धरोहर हमें एक शक्ति देती है और आशा की नई किरण को जन्म देती है। भारतीय जीवन के आदर्श भारतीय दर्शन से पैदा हुए है इसलिए उनमें सार्वभौतिक तथा सर्वकालिक सत्य निहित है। कबीर ने हमारे सामने जिन आदर्शों को पेश किया, वे विचार भारतीय दर्शन से अनुप्रमाणित है और भारतीय संस्कृति के पोषण एवं संरक्षण में उपयोगी है।

प्राचीन भारतीय समाज वैदिक धर्म से अनुप्रमाणित था, जिसे आगे चलकर हिन्दू धर्म के नाम से पुकारा गया। यद्यपि हिन्दू दर्शन ने भारत की संस्कृति को सभी आयामों पर प्रभावित कर एक समृद्ध संस्कृति का विकास किया, तथापित हमारे विविध व्यवहार 'धर्म' से संचालित होते थे। कबीर ने इन्हीं व्यवहारों को नयी दिशा प्रदान की। हिन्दू दर्शन के जीवन विषयक दृष्टिकोण यथा– यक्ष, पुनर्जन्म आदि को प्रासंगिकता के नये आयाम कबीर ने स्थापित किये और हिन्दू दर्श, जो प्रत्यक्षतः भारतीय संस्कृति का अग्रदूत है, को नयी दिशा प्रदान की। कबीर ने बड़े सरल शब्दों में स्पष्ट किया कि सभी धार्मिक संस्कृतिया मुक्ति या मोक्ष की बात करती है फिर इनमें समन्वय नहीं हो सकता है। कबीर ने सिखाया कि सभी धर्म जीवन को सुन्दर बनाने की सीख देते है। कबीर ने अपने व्यवहार में जीवन के उच्च मूल्यों, करूणा, दया, ममता, सहिष्णुता, परमार्थ को प्रतिष्ठित किया। उनके ये विचार आज की विकृत होती भारतीय संस्कृति के क्षरण को रोकने के लिए अत्यन्त समीचीन है। कबीर ने कट्टरवादिता का विरोध कर उचित मूल्यों के विकास पर ध्यान देने की बात कही, जो आज भी पूर्णतः प्रासंगिक है। कबीर ने मानव में विध्वसंक प्रवृत्ति को रोकने के लिये संस्कृति के उचित ज्ञान अर्थात् सत्य के दर्शन पर बल देते है। उनका यह विचार है कि ज्ञानी वर्ग अर्थात् प्रबुद्ध वर्ग को सांस्कृतिक उदासीनता के प्रति अपना स्वर उच्च करना चाहिए, आज भी शत–प्रतिशत प्रासंगिक है। वस्तुतः ये सभी बातें सुमार्ग और कुमार्ग के व्यापक दृष्टिकोण के साथ कबीर ने स्पष्ट की है। कबीर ने सदैव से मूल्यों की निर्वहन, जन कल्याण, परमार्थ, सत्य एवं निष्काम आदि तत्वों को अपनाने पर अधिक बल दिया। कुल मिलाकर कबीर ने सांस्कृतिक अवलम्बता को दूर करने के लिए मूल्य संस्कृति की गतिशीलता बढ़ाने का सुझाव सहज ही दृष्टिगोचर होता है जो वर्तमान प्रावधिक संस्कृति के साथ संतुलन की स्थिति कायम रखने के लिए अति आवश्यक है। कबीर के आध्यात्मिक विचारों के अध्ययन विवरण से निम्नलिखित तथ्य प्रकट होते हैं, जो इस प्रकार है –

(1) ब्रह्म से ही सृष्टि का निर्माण होता है और उसी के द्वारा उसका स्वरूप नष्ट हो जाता है।

(2) ब्रह्म इन्द्रियातीत, आगम्य, अगोचर, निर्गुण, निराकार, निर्विशेष और निरूपाधि है।

(3) आत्मा–परमात्मा का अंश है।

(4) सभी धर्मों एवं कर्मों का लक्ष्य आत्मा के चैतन्य स्वरूप को प्राप्त करने का प्रयास करना है।

(5) शरीर ब्रह्माण्ड का लघु रूप है।

(6) सभी शरीर (ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय, शूद्र) समान है क्योंकि सभी पंच तत्वों से बने है तथा सबका सृष्टा परमात्मा है।

(7) शरीर के मूल तत्व धर्म, दया, शील, विचार, सत्य, विवेक–वैराग्य, गुरू भक्ति और साधु–भाव है।

(8) मानव जीवन निस्सार और क्षण–भंगुर है।

(9) निष्काम प्रवृत्ति सफल जीवन का आधार है।

(10) संसार नश्वर तथा क्षण भंगूर है।

(11) 'माया' संसार में सर्वाधिक भ्रमकारक स्थिति है।

(12) माया से ज्ञान भक्ति द्वारा पीछा छुड़ाया जा सकता है।

(13) प्रेमानुभूति का आनन्द ही परम प्राप्तव्य है और मुक्ति का साधन है।

(14) सच्चरित्र, संतोषी, सावधान, शब्दभेदी और सुविचारों से युक्त भक्त ही ईश्वर प्रेम का अधिकारी है।

(15) योग ईश्वर की प्राप्ति के लिए आवश्यक साधन है।

(16) योग, भावमूलक एवं रागात्मक वृत्तिदायक होने के कारण परमानन्द प्राप्ति में सहायक है।

4 धर्मनिरपेक्षता सम्बन्धी विचारों की समीक्षा –

संत कबीर दास ने मध्ययुगीन भारतवर्ष में अपनी जो शिक्षायें दी, उनकी आज के धार्मिक संकीर्णता भरे वातावरण में प्रासंगिकता और भी अधिक व्यापक रूप में दिखाई पड़ती है। कबीर का दर्शन प्रमुखतः इन तथ्यों की ओर इशारा करता है कि सभी धर्मों में एक ही सर्वोच्च सत्ता की भक्ति की बात की जाती है। सब संसार एक है, सब अलग–अलग भाषाओं में एक ही संदेश देते हैं, मनुष्य को अपने को सब में देखना चाहिये, भक्ति प्राप्ति अर्थात् सभी धर्मों का मार्ग है। समान नैतिक आचरण करो, स्वयं को पहचानो और अज्ञान को मिटा चैतन्य की ओर अग्रसर हो। कबीर के ये विचार (दर्शन) वर्तमान में भी पूर्णतः प्रासंगिकता है। इनका विवेचन एक–एक करके करने का प्रयास शोधकर्त्ती ने किया है।

1. सभी धर्म एक सर्वोच्च सत्ता की उपासना –

विश्व के प्रमुख धर्मग्रन्थों, वेद, कुरान, बाईबिल, जेन्ट–अवेस्ता, गुरू ग्रन्थ साहिब आदि के प्रारम्भ में एक ही सर्वोच्च सत्ता या आत्मा की प्रार्थना, स्तुति या आह्वान किया गया है। सभी धर्म–ग्रन्थ कहते है। उस सर्वोच्च सत्ता ने अपने इस एकता सूत्र में, सूक्ष्मतम अणु से लेकर ब्रह्माण्ड पर्यन्त, सारी चेतन, अचेतन वस्तुओं को गूंथ रखा है, यह सार तत्व सभी हृदयों में छिपा बैठा है। कबीर के विचार कि एक ही सर्वोच्च तत्व से सद्मार्ग दिखाने और इस सद्मार्ग पर बिना डगमगाये चलने की दृढ़ और सदाचार पूर्ण इच्छा शक्ति प्राप्त कराने के लिए ज्ञान प्रदान करते है। उसके व सहप्राणियों के प्रति प्रेम उपजाते हैं और तद्नुसार सद्कर्मों हेतु प्रेरित करते है।

2. सभी धर्मों में भक्ति मार्ग –

यद्यपि भक्ति मार्ग यथार्थ में कोई पृथक मार्ग है फिर भी कुछ विशिष्ट उद्देश्यों से ऐसा कहते हैं। मानव के जीवन में ज्ञान/कामना (भक्ति प्रार्थना) और कर्म तीनों विभाज्य है, इनमें अद्भूत समन्वय है। शिक्षा के क्षेत्र में यह तथ्य हृदयंगम करने की आवश्यकता है कि यथार्थ ज्ञान मस्तिष्क है तो यथार्थ प्रेम या भक्ति हृदय और यथार्थ कर्म, हाथ–पैर और शरीर। अतः मस्तिष्क, हृदय और शरीर, तीनों को शिक्षित–प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।

3. सभी धर्मों के नकारात्मक पक्ष और संत कबीर –

संत कबीर का विचार है कि सभी धर्मों के विभिन्न मत सम्प्रदाय केवल अलगाव की बाते हैं। इनमें कोई सारभूत अन्तर नहीं है, ये सभी एक ही बात कहते हैं परन्तु दीवारें उठाकर, जबकि दैवी ज्ञान, डिवाइन विज़डम, सभी धर्मों की सारभूत एकता के सूर्य के प्रकाश को इनकी दीवारें नहीं रोक पाती। परन्तु आज स्थिति बदतर हो गई। प्रत्येक धर्म में काला जादू या जादू–टोना, यातु, वाग–मार्ग, भूत–प्रेत, जिन्द आदि के भयंकर व वास मार्ग प्रचलित हो चले हैं। झूठे पादरी, पण्डे, तांत्रिक, वामाचारी महानता का मुखौटा लगाकर लोगों को दिग्भ्रमित कर देते हैं। ऐसे दिग्भ्रमित लोग ही यह कहते फिरते हैं कि हमारा धर्म ऊँचा है और तुम्हारा नीचा। अन्य धर्मों के लोग मलेच्छ, काफिर, विधर्मी, गैर ईसाई आदि है, इनका दमन होना चाहिए।

संत कबीर धार्मिक विचारों का अध्ययनोपरान्त निम्नलिखित तथ्य सामने आते हैं –

(क) सर्वधर्म समन्वय

1. सभी धर्मों का उद्देश्य एक है।
2. सभी धर्म ईश्वर के अस्तित्व को मानते है।

3. सभी मानवीय मूल्यों को अपनाने पर बल देते हैं।

4. सभी धर्म साम्प्रदायिक मान्यताओं का विरोध करते है।

अन्तिम सत्य – ईश्वर का साक्षात्कार।

(ख) मानवतावादी दृष्टिकोण –

1. मानव मात्र की उत्पत्ति एक ज्योति से हुई है।

2. ईश्वर सभी में समान रूप में विद्यमान है।

3. 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' की नीति सर्वोत्तम है।

(ग) पौराणिक धर्म एवं वर्ण विरोध –

1. पौराणिक वेदान्त, पुराण आदि में वर्णित व्यवस्था के प्रति असन्तोष व्यक्त किया।

2. जाति का आधार जन्म के स्थान पर कर्म बताया।

3. मानव ईश्वर की कृति होने के कारण सभी एक समान है।

(ड.) सहज धर्म की स्थापना –

1. इन्द्रियों पर नियन्त्रण करके सत् चित्त, आनन्द स्वरूप का साक्षात्कार सम्भाव।

2. लौकिक एवं आध्यात्मिक दोनों जीवन दर्शनों को स्पष्ट किया।

3. भगवान की प्रार्थना एवं अनुग्रह केवल वैयक्तिक साधना हेतु।

(च) धार्मिक आडम्बरों का खण्डन –

1. हिन्दू धर्म के अवतारवाद व मूर्ति पूजा की भर्त्सना।

2. हिन्दू धर्म काण्ड़ों, गेरूए वस्त्र, तीर्थ यात्रा आदि का खण्डन।

3. मुस्लिम धर्म में बलि देने तथा काजी द्वारा अजान देने का मजाक उड़ाया।

4. मुस्लिम को हज यात्रा का कोई लाभ जब तक नहीं है जब तक कि उनका दिल पवित्र ना हो।

कर्मफल में विश्वास करते हुए नेक कार्य करने की शिक्षा।

5 नैतिक मूल्य सम्बन्धी विचारों की समीक्षा –

संत कबीर के दर्शन का केन्द्र बिन्दु व्यक्ति ही है। वह व्यक्ति में उत्पन्न बुराईयों को शिक्षा (विचारों के शुद्धिकरण) के द्वारा ही दूर करना चाहते थे। व्यक्ति के अन्दर जिन नैतिक मूल्यों व आध्यात्मिक मूल्यों का हास हो गया है। उनको वे

पुनप्रतिष्ठित करना चाहते थे। आज के समय में व्यक्ति में नैतिक गुणों का हास हो रहा है, वे दूसरे की सहायता का भाव नष्ट हो रहा है। स्वार्थ का भाव प्रबल है, धनार्जन और सुविधाभोगी में संलिप्त है। वह पाप–पुण्य को छोड़कर धनार्जन में लगा हुआ है तथा सुरा–सुंदरी का भोग कर रहा है। उसकी सम्पूर्ण बुद्धि व बल पदार्थ ज्ञान की ओर बल, विषय–सेवन की ओर मनोबल काम चिन्तन की ओर स्व विवेक बल, अर्थ चिन्तन में लगा हुआ है। आत्म बल मनुष्य का क्षीण हो चुका है और वह आसूरी व पशुवृत्ति को जीवन लक्ष्य बना रहा है।

ऐसे समय में जब नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का पराभाव हो चुका हो। केवल इन्द्रिय सुख की ओर मनुष्य की सब चेतन लग चुकी हो। समूचे देश में मात्स्य न्याय की परम्परा चल चुकी हो और मनुष्य का जीवन भी असुरक्षित होता रहा हो, व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ति के मद में जब विघटनकारी, आतंकवादी घटनाक्रम बढ़ रहें हो, मनुष्य शारीरिक, मानसिक रूप से त्रस्त हो सर्वत्र असुरक्षा का वातावरण हो तब किस तरह मनुष्य का अस्तित्व सुरक्षित किया जा सकता है। मौलिक चिन्तन का अभाव दिखाई देता है। केवल पश्चिम का अंधानुकरण करके अपने को प्रबुद्ध कहते हैं। भारतीय युवक दिशाहीन होते जा रहे है वे सफल होने के लिए लॉटरी, जुआ, सट्टा, घूसखोरी आदि का सहारा ले रहे है। छात्रों के द्वारा हत्या, डकैती, लूट, चोरी, बलात्कार की घटनाएँ सामान्य हो गयी है। माता–पिता, भाई–बहन के सम्बन्ध अब अप्रासंगिक होते जा रहे है। व्यक्ति की दृष्टि से भारतीय मनुष्य का अस्तित्व खतरे में है। उसका व्यक्तित्व खण्डित, मन विकल तथा आत्मा संकुचित हो गयी है। एक वाक्य में यदि कहा जाये तो यह कि भारतीय दुःख, निराशा, कुण्ठा के वायुमण्डल में साँसे ले रहा है।

संत कबीर व्यक्ति को वासनाओं का पुंज नहीं मानते अपितु वह ''अखण्ड मण्डलाकार वैश्विक चेतना व परमेष्टि चेतना'' का अंग मानते हैं। इस दृष्टि से उनके विचार व शिक्षा दर्शन का केन्द्र व्यक्ति है।

शिक्षा मनुष्य का हित तभी कर सकती है जब वह उसे अपने समाज का कोई न कोई उपयोगी घटक बनाने में समर्थ सिद्ध हो सके। कबीर कभी भी भौतिकवादी दृष्टिकोण के समर्थक नहीं रहे।

मनुष्य के जीवन का लक्ष्य भौतिकवाद से उच्च व पृथक है। भौतिकवाद पश्चिम के विचारकों के चिन्तक में प्रधान वस्तु है। किन्तु भारतीय मनोभूमि इस विचार को अमान्य करती है। कबीर के दार्शनिक विचारों को शिक्षा में स्थान देकर मनुष्यगत पशुता बताया गया है। पश्चिम के विचार में धर्म को अफीम बताया गया है। अतएव धर्म का त्याज्य माना है। इसीलिये उनके विचार का क्षेत्र पशु और पशुवृत्तियों तक ही सीमित रहा है। संत कबीर का दर्शन व्यक्ति के अधिकार की उपेक्षा नहीं करता वह उसका सर्वांगीण विकास करके प्राप्तव्य को उसे प्राप्त करना चाहता है किन्तु उसके लिये –समाज, देश, धर्म के लिये कर्त्तव्य भी अनिवार्य रूप

से सौंपना चाहता है। व्यक्ति को श्रेष्ठतम मानवीय गुणों से युक्त करने के लिये कबीर के सिद्धान्तों एवं शिक्षा दर्शन उपयोगी एवं प्रासंगिक है। इनके आधार पर व्यक्ति के व्यक्तित्व की पूर्णता का शैक्षिक लक्ष्य प्राप्त करना सहज ही है।

संत कबीर के नैतिक मूल्य सम्बन्धी विचारों का अध्ययन के बाद निम्न प्रकार से तथ्यों को स्पष्ट किया जा सकता है –

1. स्वाभिमान को मनुष्य के नैतिक उत्थान की रीढ़ बताया।
2. अत्याचार का बलपूर्वक विरोध करने की शिक्षा दी है।
3. व्यक्तित्व निर्माण के लिए अहिंसा पालन आवश्यक बताया।
4. भोग विलास क्षणिक है अतः इनसे बचना चाहिए।

मनुष्य को सांसारिक बंधनों और वैभव आदि का दास न बनने का सन्देश दिया है।

6. अच्छे लोगों की संगति को सर्वाधिक उपयोगी बताया।
7. जीवन का लक्ष्य प्राप्ति हेतु समय का सदुपयोग अनिवार्य बताया।
8. प्रेम और स्नेह को जीवनदायिनी शक्ति बताया है।
9. निरर्थक अहंभाव का त्याग तथा गुणवान से गुणों को ग्रहण करने की शिक्षा।
10. मनुष्य को अपने अन्दर अन्तर्निहित क्षमताओं तथा योग्यताओं को पहचानने का सन्देश।
11. इन्द्रियों का उचित प्रशिक्षण एवं उपयोग मनुष्य को सुमार्ग पर ले जाता है।

6 राष्ट्रीय एकता के सन्दर्भ में संत कबीर के विचारों की समीक्षा –

जो राष्ट्र कभी संसार का नेतृत्व करता था और परम पद पाता था। समस्त 'वसुधा' उसका परिवार होता था। जिसके नागरिकों में ईर्ष्या, द्वेष, रोग, काम, मोह, तृष्णा, क्रोध आदि सभी अमानवीय भाव लुप्त हो जाते थे और उसकी आत्मा परमात्मा हो जाती थी। आज उनमें रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास और भय संकुचित एवं संकीर्ण मनोवृत्ति दिखाई देती है, धार्मिक केन्द्र, वर्ग–भेद, साम्प्रदायिकता और विरोध को जन्म देते हैं। इसमें राष्ट्र समाज और मानवता की एकता और संगठन नष्ट हो जाते हैं और व्यक्ति विकास नहीं कर पाते हैं। शिक्षा का कर्त्तव्य है कि वह प्रत्येक बर्बर जाति में यही त्याग देखने को मिले शिक्षार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करे तथा तर्क और सत्यापन के आधार पर किसी विश्वास मत, निर्णय और प्रक्रिया को निर्धारित करने की क्षमता उत्पन्न करें। ऐसा करने से समाज और राष्ट्र में व्याप्त अन्धविश्वास और भय आदि समाप्त किये जा सकते हैं और समस्त राष्ट्र एवं समाज को एकता के सूत्र में बाँधा जा सकता है।

कबीर मतानुसार धर्म का लक्षण ही सदाचरण की प्रेरणा है जिसके कारण समाज में आर्थिक न्याय, राजनैतिक न्याय तथा सामाजिक न्याय स्थापित किये जा सकते हैं। संत कबीर ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज से बुराइयों को दूर करके उसे सशक्त बनाने का प्रयास किया क्योंकि एक संगठित एवं शक्तिशाली समाज एक महान राष्ट्र का निर्माण करता है। संत कबीर ने राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधा लाने वाले जातिवाद, साम्प्रदायिकतावाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद, अस्पृश्यता, धनी–निर्धन विभेद, धार्मिक कट्टरपन एवं धार्मिक उन्माद आदि का जोरदार शब्दों में तार्किक दृष्टि से जोरदार तरीकों से विरोध किया। संत कबीर यह जानते थे कि राष्ट्र की एकता के मार्ग में कौन–कौन सी बाधाऐं हो सकती है तथा उनके उन्मूलन हेतु हमें क्या–क्या करना होगा। संत कबीर ने अपने विचारों को व्यापक स्तर पर प्रसार के लिए एक ऐसी भाषा को माध्यम बनाया जो कि प्रत्येक व्यक्ति के लिये ही है चाहे उसने प्रारम्भिक शिक्षा भी ग्रहण न की हो। सरल एवं प्रभाव सिद्ध ही उनकी भाषा को पंचमेल खिचड़ी कहा गया है।

यह भाषा विभिन्न क्षेत्रों की भाषाओं जैसे हिन्दी, संस्कृत, ब्रज, अवधी, उर्दू, राजस्थान आदि से शब्द ग्रहण करके एक मुख्य भाषा का सृजन करती है जो शिक्षित/अशिक्षित का भेद किये बिना सभी की लोकप्रिय भाषा बन गई। आज के विषय में जब भाषा के नाम पर आन्दोलन, धरना, प्रदर्शन आदि किए जा रहे हैं। हमें संत कबीर के भाषा प्रबन्धन से शिक्षा लेकर एक सर्वमान्य भाषा का निर्माण करना चाहिए। इससे राष्ट्रीय एकता की भावना तो बढ़ेगी भारतीय समाज में विखण्डन की प्रवृत्ति पर भी अंकुश लगाया जा सकता है।

संत कबीर के राष्ट्रीय एकता सम्बन्धी विचारों के विवरण के अध्ययन से उनके राष्ट्रीय एकता सम्बन्धी विचार इस प्रकार से स्पष्ट किए जा सकते, जो अग्रलिखित है –

1. जात पात पूछे नहि कोई, हरि का भजै हरि का होई'' का सन्देश दिया।
2. ईश्वर ने सभी को समान बनाया है मानव द्वारा विभेद क्यों?
3. जाति, धर्म, सम्प्रदाय मनोविकारों की उपज है।
4. तत्कालीन समाज में व्याप्त बाह्य आडम्बरों का खण्डन किया।

   हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिये तर्क–संगत उपदेश दिये।
6. साम्प्रदायिकता फैलाने वाले धर्म के ठेकेदारों से जनसाधारण को सचेत किया।
7. क्लिष्ट भाषा के स्थान पर जनसाधारण की सरल भाषा को अपनाया।
8. विभिन्न क्षेत्रों की भाषाओं के समन्वित रूप पर अधिक बल दिया।

9. ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना का समर्थन किया।

10. सच्चे प्रेम के समक्ष स्थान व दूरी की सार्थकता नहीं।

11. किसी क्षेत्र या प्रान्त के स्थान पर पारस्परिक प्रेम को ज्यादा आवश्यक बताया।

कबीर साहित्य के अध्ययन तथ्यों व विवरण के आधार पर भारतीय शिक्षा प्रणाली में सुधार की दृष्टि से अग्रांकित सुझाव उपयोगी हो सकते है –

1. शिक्षा को व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का माध्यम बनाने के प्रयास किये।

2. मानवीय गुणों की अभिवृद्धि के उद्देश्य को ध्यान में रखकर शिक्षा का स्वरूप निर्धारण किया जाये।

3. शिक्षा में व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करने की युक्तियाँ खोजकर अधिकतम अवसर उपलब्ध कराये जाये।

4. शिक्षा के माध्यम से आत्मानुशासन और इन्द्रिय निग्रह के अभ्यास के लिये यौगिक क्रियाओं को पाठ्यक्रम में समाविष्ट किया जाये।

शिक्षण–पद्धति में खेल सम्बन्धी क्रियाकलापों को अनिवार्य रूप से शामिल किया जावे। मौलिक बातों को कंठस्थ करने के कार्य का कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

6. शिक्षण संस्थाओं में शिक्षकों की नियुक्ति के समय शिक्षकों की उपाधियों के अतिरिक्त उनके व्यवहारिक ज्ञान और चारित्रिक पक्ष को भी प्रमुखता दी जाये।

7. पाठ्यक्रम में छात्र पर पुस्तकों के बोझ को यथासम्भव कम किया जाये।

8. शिक्षकों में शिष्यों की क्षमता का बोध करने और उन्हें ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रेरित करने की योग्यता को उनकी प्रोन्नति का आधार बनाया जाये।

9. शिक्षार्थियों में अनुशासन की भावना और स्वस्थ जीवन मूल्यों के प्रति लगाव तथा सम्मान भाव जाग्रत करने वाली शिक्षण पद्धति को अपनाया जाये।

10. शिक्षा में जाति, धर्म, लिंग अथवा वर्ग आदि स्तरों पर किसी प्रकार के भेदभाव को पनपने के अवसर न दिये जायें।

11. शिक्षकों को छात्र की चिन्तन शक्ति और आत्मविश्वास की अभिवृद्धि में सहयोगी युक्तियों व उपायों पर बल देने के लिए प्रेरित किया जाये।

12. शिक्षकों को शिष्यों के प्रति स्नेहशील, कठिन परिश्रमी बने रहने की अनिवार्यता के महत्त्व का बोध कराया जाये।

13. शिक्षा का उद्देश्य शिष्यों की कुशलतापूर्वक ज्ञान प्रदान करना ही नहीं होना चाहिए वरन् उनमें उचित मूल्यों, उचित दृष्टिकोण एवं कार्य करने की उचित आदतों का निर्माण करना भी होना चाहिए।